I J C R M

International Journal of Contemporary Research In Multidisciplinary

Research Article

ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण में स्वयं सहायता समूहों की भूमिका: एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

बसुंधरा शुक्ला [1*], राजश्री मठपाल [2]

[1] Research Scholar, Department of Sociology, Banasthali Vidyapith, Rajasthan, India

[2] Assistant Professor, Department of Sociology, Banasthali Vidyapith, Rajasthan, India

Corresponding Author: * बसुंधरा शुक्ला

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.21377749

सारांश

ग्रामीण भारत में महिलाओं का सशक्तिकरण सतत विकास का एक महत्वपूर्ण आधार है। लंबे समय तक सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक असमानताओं के कारण ग्रामीण महिलाएँ निर्णय-निर्माण, शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार तथा वित्तीय संसाधनों तक सीमित पहुँच रखती थीं। ऐसे परिदृश्य में स्वयं सहायता समूह महिलाओं के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा मनोवैज्ञानिक सशक्तिकरण के प्रभावी माध्यम के रूप में उभरे हैं। स्वयं सहायता समूह महिलाओं को बचत, ऋण सुविधा, उद्यमिता विकास, नेतृत्व क्षमता तथा सामुदायिक भागीदारी के अवसर प्रदान करते हैं। प्रस्तुत लेख का उद्देश्य ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण में स्वयं सहायता समूहों की भूमिका का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से विश्लेषण करना है। लेख में सशक्तिकरण की अवधारणा, SHGs की संरचना एवं कार्यप्रणाली, महिलाओं के जीवन में आए बहुआयामी परिवर्तनों तथा उनके समक्ष विद्यमान चुनौतियों का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि स्वयं सहायता समूह केवल आर्थिक संस्था नहीं बल्कि सामाजिक परिवर्तन के सशक्त माध्यम हैं, जो महिलाओं में आत्मविश्वास, सामाजिक प्रतिष्ठा, निर्णय लेने की क्षमता तथा सामूहिक चेतना का विकास करते हैं।

Manuscript Information

- **ISSN No:** 2583-7397
- **Received:** 05-01-2025
- **Accepted:** 24-02-2025
- **Published:** 28-02-2025
- **IJCRM:**4(1); 2025: 178-186
- **©2025, All Rights Reserved**
- **Plagiarism Checked:** Yes
- **Peer Review Process:** Yes

How to Cite this Article

शुक्ला ब, मठपाल रा. ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण में स्वयं सहायता समूहों की भूमिका: एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण.. Int J Contemp Res Multidiscip. 2025;4(1):178-186.

Access this Article Online

www.multiarticlesjournal.com

कुंजी शब्द: ग्रामीण महिला, महिला सशक्तिकरण, स्वयं सहायता समूह, सामाजिक परिवर्तन, आर्थिक सशक्तिकरण, ग्रामीण विकास।

© 2025 बसुंधरा शुक्ला, राजश्री मठपाल. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND). https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

परिचय

महिला सशक्तिकरण समकालीन विकास विमर्श का एक महत्वपूर्ण विषय है, क्योंकि किसी भी समाज का समग्र एवं समावेशी विकास तभी संभव है जब महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में समान अवसर और अधिकार प्राप्त हों। ग्रामीण भारत में महिलाओं की भूमिका कृषि, पशुपालन, घरेलू अर्थव्यवस्था तथा परिवार के सामाजिक पुनरुत्पादन में अत्यंत महत्वपूर्ण है, फिर भी वे लंबे समय तक संसाधनों पर सीमित अधिकार, वित्तीय निर्भरता, शिक्षा की कमी, लैंगिक असमानता तथा निर्णय-निर्माण प्रक्रियाओं से बहिष्करण जैसी समस्याओं का सामना करती रही हैं। ऐसे परिदृश्य में महिलाओं को आत्मनिर्भर एवं सशक्त बनाने के लिए सामुदायिक सहभागिता पर आधारित संस्थागत प्रयासों की आवश्यकता महसूस की गई, जिनमें स्वयं सहायता समूह (Self Help Groups—SHGs) एक प्रभावी मॉडल के रूप में उभरे हैं।

भारत में स्वयं सहायता समूह आंदोलन का विस्तार 1990 के दशक में NABARD के SHG–Bank Linkage Programme से प्रारंभ हुआ तथा बाद में दीनदयाल अंत्योदय योजना–राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (DAY-NRLM) के माध्यम से इसे व्यापक स्तर पर प्रोत्साहन मिला। वर्तमान में देश के लाखों स्वयं सहायता समूहों से करोड़ों ग्रामीण महिलाएँ जुड़ी हुई हैं। इन समूहों ने महिलाओं को बचत, ऋण, उद्यमिता, कौशल विकास तथा वित्तीय समावेशन के अवसर प्रदान किए हैं। इसके अतिरिक्त स्वास्थ्य, शिक्षा, पोषण, स्वच्छता, स्थानीय शासन तथा सामाजिक जागरूकता जैसे क्षेत्रों में भी स्वयं सहायता समूहों की सक्रिय भूमिका दिखाई देती है। इस प्रकार SHGs केवल आर्थिक गतिविधियों तक सीमित नहीं हैं, बल्कि ग्रामीण समाज में सामाजिक परिवर्तन और महिला नेतृत्व के महत्वपूर्ण माध्यम बन चुके हैं।

समाजशास्त्रीय दृष्टि से स्वयं सहायता समूहों का महत्त्व केवल आय-वृद्धि या सूक्ष्म वित्त (Microfinance) तक सीमित नहीं है। ये समूह महिलाओं के बीच सहयोग, विश्वास, सामूहिकता तथा सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना विकसित करते हैं, जिससे सामाजिक पूँजी (Social Capital) का निर्माण होता है। सामूहिक बैठकों, साझा निर्णय-निर्माण और परस्पर सहयोग के माध्यम से महिलाएँ अपनी समस्याओं को समझने, अधिकारों के प्रति जागरूक होने तथा सार्वजनिक जीवन में सक्रिय भागीदारी करने के लिए प्रेरित होती हैं। परिणामस्वरूप उनकी सामाजिक पहचान, आत्मविश्वास, नेतृत्व क्षमता तथा निर्णय लेने की योग्यता में वृद्धि होती है। समाजशास्त्र के संदर्भ में स्वयं सहायता समूह ग्रामीण सामाजिक संरचना, लैंगिक संबंधों तथा शक्ति-संतुलन में परिवर्तन की प्रक्रिया को समझने का एक महत्वपूर्ण माध्यम हैं। ये समूह पितृसत्तात्मक व्यवस्था के अंतर्गत महिलाओं की सीमित भूमिका को चुनौती देते हुए उन्हें आर्थिक एवं सामाजिक रूप से अधिक सक्षम बनाते हैं। साथ ही, सामुदायिक सहभागिता और सामूहिक कार्रवाई के माध्यम से ये सामाजिक परिवर्तन तथा ग्रामीण विकास की प्रक्रिया को भी गति प्रदान करते हैं। इसलिए स्वयं सहायता समूहों का अध्ययन केवल आर्थिक विकास के संदर्भ में ही नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन, महिला सशक्तिकरण और ग्रामीण समाज के पुनर्गठन के व्यापक समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। इसी संदर्भ में प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण में स्वयं सहायता समूहों की भूमिका का समाजशास्त्रीय विश्लेषण करना है। अध्ययन यह समझने का प्रयास करता है कि स्वयं सहायता समूह किस प्रकार महिलाओं के आर्थिक, सामाजिक तथा सामुदायिक जीवन में परिवर्तन लाकर उन्हें सशक्त बनाने में योगदान देते हैं।

महिला सशक्तिकरण

महिला सशक्तिकरण (Women's Empowerment) समकालीन विकास विमर्श, मानवाधिकार तथा सामाजिक न्याय की केंद्रीय अवधारणा है। इसका आशय महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में समान अवसर, संसाधनों तक समान पहुँच, निर्णय लेने की स्वतंत्रता तथा गरिमापूर्ण जीवन जीने की क्षमता प्रदान करना है। यह केवल महिलाओं के कल्याण तक सीमित अवधारणा नहीं है, बल्कि उनके अधिकारों, स्वायत्तता, सामाजिक भागीदारी तथा संरचनात्मक असमानताओं को चुनौती देने की प्रक्रिया भी है (Kabeer, 1999)। समाजशास्त्रीय दृष्टि से महिला सशक्तिकरण एक ऐसी सामाजिक प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से महिलाएँ अपने जीवन, संसाधनों और सामाजिक संबंधों पर नियंत्रण स्थापित करती हैं तथा पारंपरिक शक्ति-संबंधों में परिवर्तन लाती हैं।

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से वैश्विक स्तर पर महिला सशक्तिकरण को विकास की अनिवार्य शर्त के रूप में स्वीकार किया जाने लगा। 1975 को संयुक्त राष्ट्र द्वारा अंतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष घोषित किया गया, जिसके साथ ही 1976–1985 के दशक को महिला दशक (United Nations Decade for Women) के रूप में मनाया गया। इस अवधि में महिलाओं की शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, समान अधिकार तथा विकास में भागीदारी को वैश्विक नीति-निर्माण का प्रमुख विषय बनाया गया (United Nations, 1975)। इसके पश्चात 1979 में महिलाओं के विरुद्ध सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर अभिसमय (Convention on the Elimination of All Forms of Discrimination Against Women—CEDAW) को अपनाया गया, जिसे महिलाओं के अधिकारों का अंतरराष्ट्रीय घोषणापत्र माना जाता है (United Nations, 1979)। महिला सशक्तिकरण की वैश्विक अवधारणा को व्यापक स्वरूप 1995 में आयोजित बीजिंग विश्व महिला सम्मेलन (Fourth World Conference on Women) से प्राप्त हुआ। इस सम्मेलन में स्वीकृत बीजिंग घोषणा और कार्ययोजना (Beijing Declaration and Platform for Action) ने शिक्षा, स्वास्थ्य, आर्थिक अवसरों, राजनीतिक प्रतिनिधित्व, हिंसा से सुरक्षा तथा निर्णय-निर्माण में महिलाओं की समान भागीदारी को सतत विकास के लिए आवश्यक माना (United Nations, 1995)। इसके बाद महिलाओं के अधिकारों को मानवाधिकारों के अभिन्न अंग के रूप में वैश्विक स्तर पर व्यापक स्वीकृति मिली।

इक्कीसवीं शताब्दी में महिला सशक्तिकरण को वैश्विक विकास एजेंडा के केंद्र में स्थापित किया गया। वर्ष 2000 में सहस्राब्दी विकास लक्ष्य (Millennium Development Goals—MDGs) तथा वर्ष 2015 में सतत विकास लक्ष्य (Sustainable Development Goals—SDGs) ने लैंगिक समानता को विकास का मूल आधार स्वीकार किया। विशेष रूप से SDG-5 का उद्देश्य महिलाओं और बालिकाओं के विरुद्ध सभी प्रकार के भेदभाव एवं हिंसा का उन्मूलन, नेतृत्व में समान भागीदारी, आर्थिक संसाधनों तक समान पहुँच तथा महिलाओं के सशक्तिकरण को सुनिश्चित करना है (United Nations, 2015)। वैश्विक स्तर पर यह

© 2025 बसुंधरा शुक्ला, राजश्री मठपाल. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND). https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

स्वीकार किया गया है कि महिलाओं की शिक्षा, स्वास्थ्य, आर्थिक स्वतंत्रता और निर्णय लेने की क्षमता में वृद्धि से गरीबी उन्मूलन, सामाजिक न्याय, आर्थिक विकास तथा लोकतांत्रिक शासन को सुदृढ़ किया जा सकता है (World Bank, 2012).

महिला सशक्तिकरण की अवधारणा को विभिन्न विद्वानों ने अलग-अलग दृष्टिकोणों से परिभाषित किया है। नायला कबीर (1999) के अनुसार सशक्तिकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से वे लोग, जिन्हें पहले विकल्प चुनने की स्वतंत्रता नहीं थी, संसाधनों , एजेंसी और उपलब्धियों के माध्यम से अपने जीवन पर नियंत्रण स्थापित करने में सक्षम होते हैं। इसी प्रकार अमर्त्य सेन (1999) ने अपने Capability Approach में प्रतिपादित किया कि विकास का वास्तविक उद्देश्य केवल आय में वृद्धि नहीं, बल्कि व्यक्तियों की क्षमताओं, स्वतंत्रताओं तथा जीवन के विकल्पों का विस्तार करना है। इस दृष्टिकोण के अनुसार महिला सशक्तिकरण महिलाओं को ऐसे अवसर प्रदान करता है, जिनसे वे अपनी इच्छाओं और क्षमताओं के अनुरूप जीवन जी सकें।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से महिला सशक्तिकरण सामाजिक संरचना, शक्ति-संबंधों तथा लैंगिक असमानताओं में परिवर्तन की प्रक्रिया है। नारीवादी समाजशास्त्र का मत है कि पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था महिलाओं की आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक भागीदारी को सीमित करती है। इसलिए सशक्तिकरण का उद्देश्य केवल महिलाओं को संसाधन उपलब्ध कराना नहीं, बल्कि उन सामाजिक संरचनाओं और संस्थागत व्यवस्थाओं में परिवर्तन लाना भी है, जो लैंगिक असमानता को बनाए रखती हैं (Batliwala, 1994)। इसी प्रकार सामाजिक पूँजी (Social Capital) का दृष्टिकोण यह मानता है कि सामूहिक संगठन, सामाजिक नेटवर्क, विश्वास और सहभागिता महिलाओं के आत्मविश्वास, नेतृत्व क्षमता तथा सामुदायिक प्रभावशीलता को बढ़ाते हैं (Putnam, 1993)। वैश्विक परिप्रेक्ष्य में महिला सशक्तिकरण को केवल सामाजिक कल्याण कार्यक्रम के रूप में नहीं, बल्कि मानवाधिकार, सामाजिक न्याय, लोकतांत्रिक सहभागिता और सतत विकास की आधारशिला के रूप में स्वीकार किया गया है। आज यह स्पष्ट है कि महिलाओं को शिक्षा, स्वास्थ्य, वित्तीय संसाधनों, नेतृत्व तथा निर्णय-निर्माण की प्रक्रियाओं में समान अवसर प्रदान किए बिना समावेशी एवं सतत विकास की कल्पना संभव नहीं है। यही कारण है कि विश्व के अधिकांश देशों ने महिला सशक्तिकरण को अपनी विकास नीतियों और सामाजिक परिवर्तन की रणनीतियों का अभिन्न अंग बनाया है।

ग्रामीण भारत में महिलाओं की स्थिति

भारत में महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थिति ऐतिहासिक, सांस्कृतिक तथा संरचनात्मक कारकों से प्रभावित रही है। प्राचीन भारतीय समाज में महिलाओं को शिक्षा, धार्मिक गतिविधियों तथा सामाजिक जीवन में अपेक्षाकृत सम्मानजनक स्थान प्राप्त था, किंतु समय के साथ पितृसत्तात्मक व्यवस्था, जाति-आधारित सामाजिक संरचना, संपत्ति पर सीमित अधिकार तथा लैंगिक विभाजन ने उनकी स्थिति को कमजोर किया। स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय संविधान ने महिलाओं को समानता, स्वतंत्रता और गरिमा के साथ जीवन जीने का अधिकार प्रदान किया। अनुच्छेद 14, 15, 16 तथा 39 समान अवसर, समान वेतन तथा लैंगिक भेदभाव के निषेध की संवैधानिक गारंटी देते हैं। इसके अतिरिक्त शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, राजनीतिक प्रतिनिधित्व तथा सामाजिक सुरक्षा से संबंधित अनेक नीतियाँ और कार्यक्रम महिलाओं के विकास के उद्देश्य से लागू किए गए हैं (Government of India, 1950).

पिछले कुछ दशकों में भारत में महिला साक्षरता, मातृ स्वास्थ्य, संस्थागत प्रसव, राजनीतिक प्रतिनिधित्व तथा वित्तीय समावेशन जैसे क्षेत्रों में उल्लेखनीय सुधार हुए हैं। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS-5) के अनुसार महिलाओं की शिक्षा, बैंक खातों तक पहुँच तथा संस्थागत प्रसव में वृद्धि हुई है, जबकि मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य संकेतकों में भी सुधार दर्ज किया गया है (International Institute for Population Sciences [IIPS] & Ministry of Health and Family Welfare [MoHFW], 2021)। इसके साथ ही प्रधानमंत्री जन-धन योजना, दीनदयाल अंत्योदय योजना–राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (DAY-NRLM) तथा स्टैंड-अप इंडिया जैसी योजनाओं ने महिलाओं के वित्तीय समावेशन और उद्यमिता को बढ़ावा दिया है। इसके बावजूद विकास के लाभ सभी वर्गों और क्षेत्रों तक समान रूप से नहीं पहुँच पाए हैं, विशेषकर ग्रामीण महिलाओं के संदर्भ में अनेक चुनौतियाँ आज भी विद्यमान हैं।

ग्रामीण भारत में महिलाएँ कृषि, पशुपालन, वानिकी, जल एवं ईंधन संग्रह, खाद्य प्रसंस्करण तथा घरेलू कार्यों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। वे परिवार की आय और आजीविका में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष योगदान देती हैं, किंतु उनके कार्य का बड़ा हिस्सा अवैतनिक होने के कारण आर्थिक आँकड़ों में पर्याप्त रूप से परिलक्षित नहीं होता (Agarwal, 1994)। भूमि, उत्पादन के साधनों और संपत्ति पर महिलाओं का स्वामित्व अभी भी सीमित है, जिससे उनकी आर्थिक स्वायत्तता प्रभावित होती है। ग्रामीण महिलाओं की श्रम भागीदारी भी प्रायः असंगठित क्षेत्र तक सीमित रहती है, जहाँ सामाजिक सुरक्षा, उचित मजदूरी तथा कार्यस्थल सुरक्षा का अभाव होता है (International Labour Organization [ILO], 2018). ग्रामीण महिलाओं की स्थिति को शिक्षा, स्वास्थ्य और पोषण जैसे सामाजिक संकेतकों से भी समझा जा सकता है। यद्यपि महिला साक्षरता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, फिर भी ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यालय छोड़ने की दर, विशेषकर माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा स्तर पर, अपेक्षाकृत अधिक है। बाल विवाह, प्रारंभिक मातृत्व, पोषण संबंधी असमानताएँ तथा स्वास्थ्य सेवाओं तक सीमित पहुँच आज भी अनेक राज्यों में गंभीर चुनौतियाँ हैं (IIPS & MoHFW, 2021)। इसके अतिरिक्त घरेलू हिंसा, लैंगिक भेदभाव तथा निर्णय-निर्माण में सीमित भागीदारी महिलाओं के सामाजिक सशक्तिकरण को प्रभावित करती है।

आर्थिक दृष्टि से भी ग्रामीण महिलाओं के सामने अनेक बाधाएँ हैं। Periodic Labour Force Survey (PLFS) के अनुसार महिला श्रम भागीदारी में कुछ सुधार हुआ है, किंतु रोजगार की गुणवत्ता, आय की स्थिरता तथा औपचारिक रोजगार तक पहुँच अभी भी सीमित है (National Statistical Office [NSO], 2024)। अधिकांश ग्रामीण महिलाएँ लघु एवं सीमांत कृषि, दिहाड़ी मजदूरी अथवा घरेलू उत्पादन गतिविधियों में संलग्न रहती हैं। वित्तीय संस्थानों तक सीमित पहुँच, उद्यमिता के लिए पूँजी का अभाव तथा तकनीकी प्रशिक्षण की कमी उनकी आर्थिक प्रगति को बाधित करती है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से ग्रामीण महिलाओं की स्थिति केवल आर्थिक संसाधनों की उपलब्धता का प्रश्न नहीं है, बल्कि सामाजिक संरचना, लैंगिक संबंधों, जाति, वर्ग तथा

© 2025 बसुंधरा शुक्ला, राजश्री मठपाल. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND). https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

सांस्कृतिक मान्यताओं से भी गहराई से जुड़ी हुई है। भारतीय ग्रामीण समाज में पितृसत्तात्मक व्यवस्था महिलाओं की गतिशीलता, शिक्षा, संपत्ति के अधिकार तथा सार्वजनिक जीवन में सहभागिता को प्रभावित करती है (Agarwal, 1994; Beteille, 1996)। नायला कबीर (1999) के अनुसार वास्तविक सशक्तिकरण तब संभव है जब महिलाओं को केवल संसाधनों तक पहुँच ही नहीं, बल्कि उन संसाधनों का उपयोग करने और अपने जीवन से संबंधित निर्णय लेने की वास्तविक क्षमता भी प्राप्त हो।

इन्हीं चुनौतियों के समाधान के लिए भारत में सामुदायिक आधारित विकास मॉडल को विशेष महत्व दिया गया है। स्वयं सहायता समूह (Self Help Groups—SHGs), महिला सहकारी समितियाँ, पंचायतों में महिलाओं का आरक्षण तथा ग्रामीण आजीविका कार्यक्रमों ने महिलाओं की सामूहिक शक्ति, वित्तीय समावेशन और नेतृत्व क्षमता को विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। विशेष रूप से DAY-NRLM के अंतर्गत लाखों ग्रामीण महिलाओं को स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से संगठित कर बचत, ऋण, उद्यमिता, कौशल विकास तथा सामाजिक जागरूकता से जोड़ा गया है (Ministry of Rural Development, 2024)। इससे स्पष्ट होता है कि ग्रामीण महिलाओं की स्थिति में सुधार केवल कल्याणकारी योजनाओं से नहीं, बल्कि सामुदायिक संगठन, संस्थागत सहयोग तथा सामाजिक संरचनाओं में परिवर्तन के माध्यम से अधिक प्रभावी ढंग से संभव है। यही संदर्भ स्वयं सहायता समूहों को महिला सशक्तिकरण के एक महत्वपूर्ण समाजशास्त्रीय उपकरण के रूप में स्थापित करता है।

स्वयं सहायता समूह का उद्भव एवं विकास

स्वयं सहायता समूह (Self Help Groups—SHGs) का उद्भव ग्रामीण निर्धनता, वित्तीय बहिष्करण तथा सामाजिक असमानताओं के समाधान के लिए विकसित सामुदायिक विकास की एक महत्वपूर्ण अवधारणा के रूप में हुआ। इसका मूल उद्देश्य समाज के आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों, विशेषकर महिलाओं, को संगठित कर सामूहिक बचत, ऋण सुविधा, आजीविका संवर्धन तथा सामाजिक सशक्तिकरण के माध्यम से आत्मनिर्भर बनाना था। समय के साथ SHGs केवल सूक्ष्म वित्त तक सीमित नहीं रहे, बल्कि सामाजिक परिवर्तन, सामुदायिक सहभागिता, महिला नेतृत्व तथा समावेशी विकास के प्रभावी माध्यम के रूप में स्थापित हुए। आज विश्व के अनेक विकासशील देशों में SHG मॉडल को गरीबी उन्मूलन, वित्तीय समावेशन और महिला सशक्तिकरण की सफल रणनीति माना जाता है (World Bank, 2012).

वैश्विक पृष्ठभूमि: मोहम्मद यूनुस और ग्रामीण बैंक मॉडल: स्वयं सहायता समूह आंदोलन की वैचारिक पृष्ठभूमि का संबंध सूक्ष्म वित्त की अवधारणा से है। 1970 के दशक में बांग्लादेश के अर्थशास्त्री डॉ. मोहम्मद यूनुस ने यह अनुभव किया कि ग्रामीण निर्धन परिवार, विशेषकर महिलाएँ, अत्यंत कम पूँजी के अभाव में भी आर्थिक गतिविधियाँ प्रारंभ नहीं कर पाती थीं और साहूकारों पर निर्भर रहने के कारण ऋण-जाल में फँसी रहती थीं। इस समस्या के समाधान के लिए उन्होंने 1976 में ग्रामीण बैंक (Grameen Bank) मॉडल की शुरुआत की, जिसमें बिना पारंपरिक जमानत के छोटे ऋण सामूहिक उत्तरदायित्व के आधार पर उपलब्ध कराए गए (Yunus, 2007). ग्रामीण बैंक मॉडल की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह थी कि इसमें महिलाओं को प्राथमिकता दी गई। यह अनुभव किया गया कि महिलाएँ ऋण के उपयोग, पुनर्भुगतान तथा परिवार के कल्याण में अपेक्षाकृत अधिक उत्तरदायित्व का परिचय देती हैं। परिणामस्वरूप बांग्लादेश में लाखों महिलाओं की आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ और यह मॉडल विश्व के अनेक देशों में सूक्ष्म वित्त और महिला सशक्तिकरण की प्रेरणा बना। वर्ष 2006 में डॉ. मोहम्मद यूनुस और ग्रामीण बैंक को गरीबी उन्मूलन में योगदान के लिए नोबेल शांति पुरस्कार से सम्मानित किया गया (Nobel Foundation, 2006).

- **भारत में स्वयं सहायता समूह आंदोलन की शुरुआत**

भारत में स्वयं सहायता समूह आंदोलन का संस्थागत विकास राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (NABARD) के नेतृत्व में हुआ। 1980 के दशक के उत्तरार्ध में NABARD ने यह अनुभव किया कि औपचारिक बैंकिंग व्यवस्था ग्रामीण गरीबों, विशेषकर महिलाओं, तक प्रभावी रूप से नहीं पहुँच पा रही थी। इसके समाधान के लिए 1992 में SHG–Bank Linkage Programme (SBLP) प्रारंभ किया गया, जिसके अंतर्गत स्वयं सहायता समूहों को बैंकों से जोड़ा गया ताकि वे सामूहिक बचत के आधार पर औपचारिक ऋण प्राप्त कर सकें (NABARD, 1992). यह कार्यक्रम भारत में सूक्ष्म वित्त आंदोलन की आधारशिला सिद्ध हुआ। इसकी विशेषता यह थी कि समूह के सदस्य नियमित बचत करते थे, आंतरिक ऋण व्यवस्था विकसित करते थे तथा बैंक उनके सामूहिक वित्तीय अनुशासन के आधार पर ऋण उपलब्ध कराते थे। इससे महिलाओं में वित्तीय अनुशासन, बचत की आदत तथा औपचारिक बैंकिंग प्रणाली के प्रति विश्वास विकसित हुआ। आगे चलकर यह कार्यक्रम विश्व के सबसे बड़े माइक्रोफाइनेंस कार्यक्रमों में से एक बन गया (NABARD, 2024).

स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना (SGSY), 1999:

ग्रामीण गरीबी उन्मूलन को अधिक प्रभावी बनाने के उद्देश्य से भारत सरकार ने 1999 में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना (Swarnjayanti Gram Swarozgar Yojana—SGSY) प्रारंभ की। इस योजना का मुख्य उद्देश्य गरीब परिवारों को स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से संगठित कर स्वरोजगार के अवसर उपलब्ध कराना था (Ministry of Rural Development, 1999). SGSY के अंतर्गत समूह निर्माण, क्षमता विकास, कौशल प्रशिक्षण, बैंक ऋण तथा सरकारी अनुदान को एकीकृत किया गया। इस योजना ने SHGs को केवल बचत और ऋण तक सीमित न रखकर आजीविका विकास और उद्यमिता से जोड़ने का प्रयास किया। यद्यपि इसके कार्यान्वयन में विभिन्न राज्यों में असमानताएँ रहीं, फिर भी इसने SHG आधारित ग्रामीण विकास की मजबूत नींव तैयार की।

राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (NRLM), 2011:

SGSY के अनुभवों के आधार पर भारत सरकार ने वर्ष 2011 में राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (National Rural Livelihoods Mission—NRLM) प्रारंभ किया। NRLM का उद्देश्य प्रत्येक ग्रामीण गरीब परिवार, विशेषकर महिलाओं, को संगठित कर मजबूत सामुदायिक संस्थाओं का निर्माण करना तथा उन्हें सतत आजीविका के अवसरों से जोड़ना था (Ministry of Rural Development, 2011). NRLM की विशेषता यह रही कि इसमें स्वयं सहायता समूहों को केवल

© 2025 बसुंधरा शुक्ला, राजश्री मठपाल. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND). https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

वित्तीय संस्था के रूप में नहीं, बल्कि सामुदायिक संगठन के रूप में विकसित किया गया। महिलाओं के समूहों को ग्राम संगठन (Village Organization) तथा क्लस्टर स्तरीय महासंघ (Cluster Level Federation) से जोड़कर बहु-स्तरीय संस्थागत ढाँचा तैयार किया गया। इससे महिलाओं की सामूहिक सौदेबाजी क्षमता, नेतृत्व कौशल तथा स्थानीय शासन में सहभागिता को बल मिला।

दीनदयाल अंत्योदय योजना–राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (DAY-NRLM), 2015:

वर्ष 2015 में NRLM का पुनर्गठन कर इसे दीनदयाल अंत्योदय योजना–राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (DAY-NRLM) के रूप में लागू किया गया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य ग्रामीण निर्धन महिलाओं को वित्तीय समावेशन, कौशल विकास, उद्यमिता, डिजिटल वित्त, सामाजिक सुरक्षा तथा बाजार से जोड़ना था (Ministry of Rural Development, 2024). DAY-NRLM के अंतर्गत देशभर में करोड़ों महिलाओं को स्वयं सहायता समूहों से जोड़ा गया है। मिशन के माध्यम से बैंक ऋण, सामुदायिक निवेश कोष, उद्यमिता विकास, डिजिटल वित्तीय साक्षरता तथा महिला उत्पादक समूहों (Producer Groups) को प्रोत्साहन दिया गया। हाल के वर्षों में "लखपति दीदी" जैसी पहलें SHGs से जुड़ी महिलाओं की आय में उल्लेखनीय वृद्धि करने की दिशा में कार्य कर रही हैं।

SHG आंदोलन और समाजशास्त्रीय विश्लेषण

वर्तमान समय में स्वयं सहायता समूह आंदोलन भारत के सबसे बड़े महिला-आधारित सामुदायिक आंदोलनों में से एक है। NABARD तथा DAY-NRLM के सहयोग से लाखों SHGs ग्रामीण महिलाओं को बचत, ऋण, उद्यमिता, कृषि, डेयरी, हस्तशिल्प, खाद्य प्रसंस्करण, डिजिटल भुगतान तथा स्थानीय बाजारों से जोड़ रहे हैं (NABARD, 2024). समाजशास्त्रीय दृष्टि से SHGs का महत्व केवल आर्थिक नहीं है। ये समूह महिलाओं में सामाजिक पूँजी (Social Capital), सामूहिक चेतना (Collective Consciousness) तथा सहभागी विकास (Participatory Development) को सुदृढ़ करते हैं। समूह की नियमित बैठकों, सामूहिक निर्णयों और साझा उत्तरदायित्व के माध्यम से महिलाओं में विश्वास, सहयोग और नेतृत्व क्षमता का विकास होता है। नायला कबीर (1999) के अनुसार सशक्तिकरण की प्रक्रिया संसाधनों, एजेंसी और उपलब्धियों के समन्वय से पूर्ण होती है, जबकि SHGs इन तीनों आयामों को व्यवहारिक रूप से सुदृढ़ करते हैं। इसी प्रकार अमर्त्य सेन (1999) के क्षमता दृष्टिकोण के अनुसार SHGs महिलाओं की क्षमताओं, विकल्पों और स्वतंत्रताओं का विस्तार करते हैं। इस प्रकार SHGs का ऐतिहासिक विकास यह स्पष्ट करता है कि वे केवल सूक्ष्म वित्तीय संस्थाएँ नहीं हैं, बल्कि ग्रामीण सामाजिक संरचना में परिवर्तन, लैंगिक समानता, सामुदायिक सहभागिता तथा महिला नेतृत्व के प्रभावी माध्यम हैं। भारत में इनका विकास एक ऐसी प्रक्रिया का प्रतिनिधित्व करता है जिसमें आर्थिक विकास और सामाजिक परिवर्तन परस्पर पूरक बनकर ग्रामीण महिलाओं के समग्र सशक्तिकरण का आधार तैयार करते हैं।

स्वयं सहायता समूह: सैद्धांतिक विश्लेषण

ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण में स्वयं सहायता समूहों की भूमिका को समझने के लिए केवल आर्थिक दृष्टिकोण पर्याप्त नहीं है। SHGs महिलाओं की आय में वृद्धि करने के साथ-साथ सामाजिक संबंधों, शक्ति-संतुलन, सामुदायिक भागीदारी, निर्णय-निर्माण तथा नेतृत्व क्षमता में भी परिवर्तन लाते हैं। इसलिए इस अध्ययन के विश्लेषण हेतु बहुआयामी समाजशास्त्रीय एवं विकास संबंधी सिद्धांतों का उपयोग आवश्यक है। प्रस्तुत अध्ययन मुख्यतः नायला कबीर का सशक्तिकरण मॉडल (Empowerment Framework), अमर्त्य सेन का क्षमता दृष्टिकोण (Capability Approach), नारीवादी सिद्धांत (Feminist Theory), सामाजिक पूँजी सिद्धांत (Social Capital Theory) तथा सहभागी विकास सिद्धांत (Participatory Development Theory) पर आधारित है।

- **नायला कबीर का सशक्तिकरण मॉडल (Naila Kabeer's Empowerment Framework)**

महिला सशक्तिकरण की अवधारणा को व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत करने वाले प्रमुख विद्वानों में नायला कबीर का विशेष स्थान है। कबीर (1999) के अनुसार सशक्तिकरण वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से वे व्यक्ति, जिन्हें पहले अपने जीवन से संबंधित निर्णय लेने का अवसर नहीं था, संसाधनों (Resources), एजेंसी (Agency) तथा उपलब्धियों (Achievements) के माध्यम से अपनी पसंद और विकल्पों का विस्तार करते हैं। कबीर के मॉडल के तीन प्रमुख घटक हैं—

संसाधन (Resources): संसाधनों में आर्थिक, सामाजिक, शैक्षिक तथा संस्थागत अवसर सम्मिलित होते हैं। SHGs महिलाओं को बचत, ऋण, बैंकिंग सेवाओं, प्रशिक्षण तथा सरकारी योजनाओं से जोड़कर इन संसाधनों तक उनकी पहुँच सुनिश्चित करते हैं। एजेंसी (Agency): एजेंसी का अर्थ महिलाओं की निर्णय लेने, विकल्प चुनने तथा अपने हितों की रक्षा करने की क्षमता से है। SHGs में नियमित बैठकों, सामूहिक निर्णयों तथा नेतृत्व के अवसरों के माध्यम से महिलाओं का आत्मविश्वास और निर्णय-निर्माण की क्षमता विकसित होती है। उपलब्धियाँ

(Achievements):

संसाधनों और एजेंसी के प्रभावी उपयोग से महिलाओं के जीवन में जो सकारात्मक परिवर्तन आते हैं, वे उपलब्धियाँ कहलाती हैं। इनमें आय में वृद्धि, सामाजिक सम्मान, शिक्षा, स्वास्थ्य, राजनीतिक भागीदारी तथा आत्मनिर्भरता प्रमुख हैं। इस प्रकार कबीर का मॉडल SHGs को महिला सशक्तिकरण की एक व्यवहारिक प्रक्रिया के रूप में समझने का सुदृढ़ सैद्धांतिक आधार प्रदान करता है।

- **अमर्त्य सेन का क्षमता दृष्टिकोण (Capability Approach)**

अमर्त्य सेन (1999) ने विकास को केवल आर्थिक वृद्धि या आय में वृद्धि तक सीमित न मानकर व्यक्तियों की क्षमताओं (Capabilities) और स्वतंत्रताओं (Freedoms) के विस्तार से जोड़ा। उनके अनुसार वास्तविक विकास तब होता है जब व्यक्ति अपने जीवन के बारे में स्वतंत्र रूप से निर्णय लेने और अपनी संभावनाओं को साकार करने में सक्षम हो।

ग्रामीण महिलाओं के संदर्भ में SHGs उनकी क्षमताओं का विस्तार अनेक स्तरों पर करते हैं। समूहों के माध्यम से महिलाएँ वित्तीय साक्षरता, कौशल विकास, उद्यमिता, डिजिटल सेवाओं तथा सामाजिक नेतृत्व का अनुभव प्राप्त करती हैं। इससे वे केवल आय अर्जित करने में ही सक्षम

© 2025 बसुंधरा शुक्ला, राजश्री मठपाल. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND). https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

नहीं होतीं, बल्कि अपने परिवार और समुदाय में अधिक प्रभावी भूमिका निभाने लगती हैं। इसलिए SHGs महिलाओं की "कार्य करने की क्षमता" (Functionings) और "विकल्प चुनने की स्वतंत्रता" दोनों को सुदृढ़ करते हैं। सेन का क्षमता दृष्टिकोण यह भी स्पष्ट करता है कि गरीबी केवल आय की कमी नहीं, बल्कि अवसरों और क्षमताओं का अभाव है। SHGs इस अभाव को दूर करने का एक प्रभावी माध्यम बनते हैं।

- **नारीवादी सिद्धांत (Feminist Theory)**

नारीवादी सिद्धांत का मूल उद्देश्य समाज में विद्यमान लैंगिक असमानताओं, पितृसत्तात्मक सत्ता-संबंधों तथा महिलाओं के संरचनात्मक शोषण का विश्लेषण करना है। इस सिद्धांत के अनुसार महिलाओं की अधीनस्थ स्थिति केवल जैविक अंतर का परिणाम नहीं, बल्कि सामाजिक संस्थाओं, सांस्कृतिक मान्यताओं और शक्ति-संरचनाओं द्वारा निर्मित होती है (Batliwala, 1994). ग्रामीण भारत में पितृसत्तात्मक व्यवस्था महिलाओं की शिक्षा, संपत्ति, रोजगार, गतिशीलता तथा निर्णय लेने की स्वतंत्रता को सीमित करती है। SHGs इस स्थिति को चुनौती देते हुए महिलाओं को आर्थिक संसाधनों, बैंकिंग सेवाओं, सामूहिक संगठन और नेतृत्व के अवसर उपलब्ध कराते हैं। आर्थिक स्वायत्तता बढ़ने के साथ महिलाएँ परिवार एवं समुदाय में अधिक प्रभावी भूमिका निभाने लगती हैं। इस प्रकार SHGs लैंगिक शक्ति-संतुलन में सकारात्मक परिवर्तन लाने वाले सामाजिक मंच के रूप में कार्य करते हैं।

- **सामाजिक पूँजी सिद्धांत (Social Capital Theory)**

सामाजिक पूँजी सिद्धांत के अनुसार सामाजिक संबंध, विश्वास (Trust), सहयोग (Cooperation) तथा नेटवर्क (Networks) किसी भी समाज के विकास के महत्वपूर्ण संसाधन हैं (Putnam, 1993). जब व्यक्ति सामूहिक रूप से कार्य करते हैं, तो सामाजिक विश्वास और सहयोग बढ़ता है, जिससे सामुदायिक विकास की प्रक्रिया मजबूत होती है। SHGs सामाजिक पूँजी के निर्माण का उत्कृष्ट उदाहरण हैं। नियमित बैठकों, सामूहिक बचत, पारस्परिक सहयोग और साझा उत्तरदायित्व के माध्यम से महिलाओं के बीच विश्वास और सहयोग विकसित होता है। इससे वे व्यक्तिगत समस्याओं के स्थान पर सामूहिक समाधान खोजने में सक्षम होती हैं। सामाजिक पूँजी का यह निर्माण महिलाओं की सामाजिक पहचान, सामुदायिक सहभागिता तथा स्थानीय शासन में भागीदारी को भी सुदृढ़ करता है।

- **सहभागी विकास सिद्धांत (Participatory Development Theory)**

सहभागी विकास सिद्धांत का आधार यह है कि विकास की योजनाएँ तभी प्रभावी और टिकाऊ होती हैं जब स्थानीय समुदाय उनकी योजना, क्रियान्वयन और मूल्यांकन में सक्रिय भागीदारी निभाए (Chambers, 1997). SHGs इसी सिद्धांत का व्यवहारिक रूप हैं। इनमें महिलाएँ स्वयं अपनी बचत का प्रबंधन करती हैं, ऋण संबंधी निर्णय लेती हैं, आजीविका गतिविधियों की योजना बनाती हैं तथा सामुदायिक समस्याओं के समाधान में भाग लेती हैं। इससे उनमें स्वामित्व (Ownership), उत्तरदायित्व (Responsibility) तथा नेतृत्व क्षमता का विकास होता है। SHGs महिलाओं को सरकारी योजनाओं और स्थानीय शासन से जोड़कर सहभागी लोकतंत्र को भी सुदृढ़ करते हैं।

- **पियरे बोरदियू का सामाजिक पूँजी सिद्धांत (Pierre Bourdieu's Social Capital Theory)**

फ्रांसीसी समाजशास्त्री पियरे बोरदियू ने सामाजिक पूँजी) को उन वास्तविक एवं संभावित संसाधनों के रूप में परिभाषित किया है, जो व्यक्ति को उसके सामाजिक संबंधों, नेटवर्क, समूह सदस्यता तथा सामाजिक मान्यता के माध्यम से प्राप्त होते हैं (Bourdieu, 1986)। बोरदियू के अनुसार सामाजिक पूँजी, आर्थिक पूँजी और सांस्कृतिक पूँजी परस्पर जुड़ी होती हैं तथा सामाजिक असमानताओं और शक्ति-संबंधों को प्रभावित करती हैं। स्वयं सहायता समूहों के संदर्भ में यह सिद्धांत अत्यंत प्रासंगिक है। SHGs महिलाओं को केवल वित्तीय संसाधन उपलब्ध नहीं कराते, बल्कि उन्हें सामाजिक नेटवर्क, सामुदायिक सहयोग, संस्थागत संपर्क तथा सामूहिक पहचान भी प्रदान करते हैं। नियमित बैठकों, सामूहिक बचत, प्रशिक्षण तथा बैंकिंग संस्थाओं से जुड़ाव के माध्यम से महिलाओं की सामाजिक पूँजी का विस्तार होता है। परिणामस्वरूप वे सरकारी योजनाओं, बाजारों, वित्तीय संस्थानों और स्थानीय प्रशासन तक अधिक प्रभावी पहुँच बना पाती हैं। इस प्रकार SHGs महिलाओं की आर्थिक पूँजी के साथ-साथ उनकी सामाजिक एवं सांस्कृतिक पूँजी का भी विकास करते हैं, जिससे उनकी सामाजिक स्थिति और निर्णय लेने की क्षमता मजबूत होती है।

- **एंथनी गिडेन्स का संरचनाकरण सिद्धांत (Anthony Giddens' Structuration Theory)**

एंथनी गिडेन्स ने अपने संरचनाकरण सिद्धांत में यह प्रतिपादित किया कि सामाजिक संरचना और मानवीय क्रिया परस्पर निर्भर होती हैं। व्यक्ति केवल सामाजिक संरचनाओं का निष्क्रिय अनुसरण नहीं करता, बल्कि अपनी क्रियाओं के माध्यम से उन्हीं संरचनाओं का पुनर्निर्माण और परिवर्तन भी करता है (Giddens, 1984)। ग्रामीण भारत में महिलाओं का जीवन पितृसत्तात्मक सामाजिक संरचना, लैंगिक भूमिकाओं तथा पारंपरिक मानदंडों से प्रभावित होता है। प्रारंभिक अवस्था में महिलाएँ इन संरचनात्मक सीमाओं के भीतर कार्य करती हैं, किंतु जब वे स्वयं सहायता समूहों से जुड़ती हैं, तो सामूहिक संगठन, प्रशिक्षण, आर्थिक अवसर तथा नेतृत्व के माध्यम से उनकी एजेंसी (Agency) विकसित होती है। परिणामस्वरूप वे परिवार, समुदाय और स्थानीय संस्थाओं में अपनी भूमिका का पुनर्निर्धारण करने लगती हैं। ग्रामसभा में भागीदारी, बैंकिंग सेवाओं का उपयोग, उद्यमिता तथा पंचायत स्तर पर नेतृत्व जैसे परिवर्तन यह दर्शाते हैं कि महिलाएँ केवल सामाजिक संरचना से प्रभावित नहीं होतीं, बल्कि उसे परिवर्तित भी करती हैं। इसलिए सिद्धांत SHGs द्वारा उत्पन्न सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को समझने के लिए अत्यंत उपयुक्त है।

- **लॉन्गवे का महिला सशक्तिकरण रूपरेखा (Longwe's Women's Empowerment Framework)**

सारा हुलुपेकिले लॉन्गवे (Sara Hlupekile Longwe) ने 1991 में महिला सशक्तिकरण का एक बहुआयामी विश्लेषणात्मक ढाँचा प्रस्तुत किया, जिसे Longwe's Women's Empowerment Framework कहा जाता है। इस रूपरेखा के अनुसार महिला सशक्तिकरण पाँच क्रमिक स्तरों पर विकसित होता है—

- **कल्याण (Welfare)** – महिलाओं की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति।

© 2025 बसुंधरा शुक्ला, राजश्री मठपाल. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND). https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

- **पहुँच (Access)** – शिक्षा, भूमि, ऋण, रोजगार तथा अन्य संसाधनों तक समान पहुँच।
- **जागरूकता (Conscientisation)** – लैंगिक असमानता और अधिकारों के प्रति चेतना का विकास।
- **भागीदारी (Participation)** – निर्णय-निर्माण और विकास कार्यक्रमों में समान सहभागिता।
- **नियंत्रण (Control)** – संसाधनों और निर्णयों पर महिलाओं एवं पुरुषों का समान नियंत्रण।

यह रूपरेखा स्वयं सहायता समूहों के प्रभाव का मूल्यांकन करने के लिए अत्यंत उपयोगी है। SHGs प्रारंभ में महिलाओं को बचत और ऋण जैसी बुनियादी सुविधाएँ उपलब्ध कराकर उनके कल्याण और संसाधनों तक पहुँच सुनिश्चित करते हैं। इसके बाद प्रशिक्षण, सामूहिक बैठकों और सामाजिक जागरूकता अभियानों के माध्यम से उनमें अधिकारों के प्रति चेतना विकसित होती है। समय के साथ महिलाएँ ग्रामसभा, पंचायत, सामुदायिक संगठनों और स्थानीय विकास कार्यक्रमों में सक्रिय भागीदारी करने लगती हैं तथा आर्थिक एवं सामाजिक निर्णयों में उनकी भूमिका सुदृढ़ होती है। इस प्रकार SHGs महिलाओं को लॉन्गवे द्वारा प्रतिपादित सशक्तिकरण के पाँचों स्तरों की ओर अग्रसर करते हैं।
उपरोक्त सभी सिद्धांत SHGs के विभिन्न आयामों को स्पष्ट करते हैं। नायला कबीर का मॉडल सशक्तिकरण की प्रक्रिया को संसाधनों, एजेंसी और उपलब्धियों के माध्यम से समझाता है; अमर्त्य सेन का क्षमता दृष्टिकोण महिलाओं की स्वतंत्रता और अवसरों के विस्तार पर बल देता है; नारीवादी सिद्धांत पितृसत्तात्मक संरचनाओं और लैंगिक असमानताओं की व्याख्या करता है; सामाजिक पूँजी सिद्धांत सामूहिक संगठन, विश्वास और सहयोग की भूमिका को रेखांकित करता है; जबकि सहभागी विकास सिद्धांत महिलाओं की सक्रिय भागीदारी को विकास का आधार मानता है। बोरदियू सामाजिक नेटवर्क और सामाजिक पूँजी की भूमिका को रेखांकित करते हैं; गिडेन्स सामाजिक संरचना और मानवीय एजेंसी के पारस्परिक संबंध को समझाते हैं; जबकि लॉन्गवे महिलाओं के सशक्तिकरण के विभिन्न स्तरों का विश्लेषण प्रस्तुत करती हैं। इन सभी दृष्टिकोणों का समेकित विश्लेषण यह स्पष्ट करता है कि स्वयं सहायता समूह केवल सूक्ष्म वित्तीय संस्थाएँ नहीं हैं, बल्कि वे ग्रामीण महिलाओं के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा मनोवैज्ञानिक सशक्तिकरण के प्रभावी माध्यम हैं। SHGs महिलाओं को संसाधनों तक पहुँच, निर्णय लेने की क्षमता, सामूहिक पहचान, सामाजिक सम्मान और नेतृत्व प्रदान करते हैं। परिणामस्वरूप वे ग्रामीण समाज में लैंगिक समानता, सामाजिक न्याय और सहभागी विकास की प्रक्रिया को गति देते हैं। इसलिए प्रस्तुत अध्ययन में SHGs का विश्लेषण बहुआयामी समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण के आधार पर किया गया है, जिससे ग्रामीण महिला सशक्तिकरण की प्रक्रिया को अधिक व्यापक और वैज्ञानिक रूप से समझा जा सके। इन सभी सिद्धांतों का संयुक्त उपयोग स्वयं सहायता समूहों के बहुआयामी प्रभावों को समझने के लिए एक व्यापक समाजशास्त्रीय आधार प्रदान करता है। यह स्पष्ट करता है कि SHGs केवल वित्तीय संस्थाएँ नहीं हैं, बल्कि वे महिलाओं की सामाजिक स्थिति, निर्णय-निर्माण क्षमता, नेतृत्व, सामुदायिक सहभागिता और शक्ति-संबंधों में परिवर्तन लाने वाली परिवर्तनकारी सामाजिक संस्थाएँ हैं।

स्वयं सहायता समूहों) की भूमिका का समाजशास्त्रीय विश्लेषण
समाजशास्त्रीय दृष्टि से स्वयं सहायता समूह (SHGs) केवल बचत एवं ऋण प्रदान करने वाली वित्तीय संस्थाएँ नहीं हैं, बल्कि वे सामाजिक परिवर्तन, महिला सशक्तिकरण और सामुदायिक विकास के महत्वपूर्ण माध्यम हैं। SHGs ग्रामीण महिलाओं को संगठित कर उन्हें आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा मनोवैज्ञानिक रूप से सशक्त बनाते हैं। इन समूहों के माध्यम से महिलाएँ सामूहिक रूप से अपनी समस्याओं की पहचान करती हैं, समाधान खोजती हैं तथा विकास की प्रक्रियाओं में सक्रिय भागीदारी निभाती हैं। स्व-सहायता समूह की मदद से, महिला सशक्तिकरण के सभी पहलुओं में कई बदलाव देखे गए हैं, जैसे कि:

आर्थिक सशक्तिकरण: SHGs महिलाओं को नियमित बचत, ऋण सुविधा, स्वरोजगार तथा उद्यमिता के अवसर प्रदान करते हैं। इससे उनकी आय में वृद्धि होती है, वित्तीय निर्भरता कम होती है तथा परिवार में आर्थिक निर्णय लेने की क्षमता विकसित होती है। आर्थिक संसाधनों तक पहुँच महिलाओं की स्वायत्तता और आत्मनिर्भरता को मजबूत करती है।

सामाजिक सशक्तिकरण: SHGs महिलाओं के बीच सहयोग, विश्वास और सामूहिकता की भावना विकसित करते हैं। समूह बैठकों के माध्यम से महिलाओं में शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता, पोषण, लैंगिक समानता तथा सामाजिक अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ती है। इससे उनकी सामाजिक पहचान और सम्मान में वृद्धि होती है तथा वे सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध सामूहिक रूप से आवाज उठाने में सक्षम होती हैं।

राजनीतिक सशक्तिकरण: स्वयं सहायता समूह महिलाओं को ग्रामसभा, पंचायत और अन्य स्थानीय संस्थाओं में भागीदारी के लिए प्रोत्साहित करते हैं। इससे उनकी नेतृत्व क्षमता विकसित होती है और स्थानीय शासन में उनकी भूमिका मजबूत होती है। अनेक क्षेत्रों में SHGs से जुड़ी महिलाएँ पंचायत प्रतिनिधि, सामुदायिक नेता तथा सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में उभरी हैं।

मनोवैज्ञानिक सशक्तिकरण: SHGs महिलाओं में आत्मविश्वास, आत्मसम्मान और निर्णय लेने की क्षमता का विकास करते हैं। सार्वजनिक मंचों पर बोलने, सामूहिक निर्णय लेने तथा आर्थिक गतिविधियों में भागीदारी से महिलाओं की हीन भावना कम होती है और उनमें आत्मनिर्भरता की भावना विकसित होती है।
इसके अलावा, ग्रामीण समाज में कई सकारात्मक प्रभाव भी देखे गए हैं।

सामाजिक पूँजी एवं सामूहिक चेतना का निर्माण :पियरे बोरदियू के सामाजिक पूँजी सिद्धांत के अनुसार सामाजिक नेटवर्क और पारस्परिक विश्वास महत्वपूर्ण संसाधन हैं। SHGs महिलाओं के बीच सामाजिक संबंधों, सहयोग और विश्वास का निर्माण करते हैं, जिससे उनकी सामूहिक शक्ति बढ़ती है। यह सामाजिक पूँजी महिलाओं को सरकारी योजनाओं, वित्तीय संस्थाओं तथा सामुदायिक संसाधनों तक पहुँच बनाने में सहायता करती है।

© 2025 बसुंधरा शुक्ला, राजश्री मठपाल. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND). https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

लैंगिक संबंधों में परिवर्तन: नारीवादी दृष्टिकोण से SHGs पितृसत्तात्मक संरचनाओं को चुनौती देते हैं। आर्थिक स्वतंत्रता और सामूहिक संगठन के माध्यम से महिलाएँ परिवार और समुदाय में अधिक प्रभावशाली भूमिका निभाने लगती हैं। इससे पारंपरिक लैंगिक भूमिकाओं और शक्ति-संबंधों में परिवर्तन दिखाई देता है। अतः, हम कह सकते हैं कि नायला कबीर के संसाधन–एजेंसी–उपलब्धि मॉडल, अमर्त्य सेन के क्षमता दृष्टिकोण, बोरदियू के सामाजिक पूँजी सिद्धांत तथा गिडेन्स के संरचनाकरण सिद्धांत के आलोक में देखा जाए तो SHGs महिलाओं को केवल आर्थिक अवसर ही नहीं प्रदान करते, बल्कि उनकी क्षमताओं, सामाजिक भागीदारी, नेतृत्व और निर्णय-निर्माण की शक्ति का भी विस्तार करते हैं। इस प्रकार SHGs ग्रामीण महिलाओं के बहुआयामी सशक्तिकरण तथा ग्रामीण समाज में सामाजिक परिवर्तन के प्रभावी साधन के रूप में कार्य करते हैं।

चुनौतियाँ

यद्यपि स्वयं सहायता समूह (Self Help Groups—SHGs) ने ग्रामीण महिलाओं के आर्थिक एवं सामाजिक सशक्तिकरण में उल्लेखनीय योगदान दिया है, फिर भी इनके प्रभावी संचालन एवं दीर्घकालिक स्थिरता के समक्ष अनेक चुनौतियाँ विद्यमान हैं। सबसे प्रमुख चुनौती महिलाओं की सीमित शिक्षा एवं वित्तीय साक्षरता है, जिसके कारण वे बैंकिंग प्रक्रियाओं, डिजिटल वित्तीय सेवाओं तथा सरकारी योजनाओं का पूर्ण लाभ नहीं उठा पातीं। ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल विभाजन (Digital Divide) भी महिलाओं की आर्थिक गतिविधियों एवं बाजार तक पहुँच को सीमित करता है।

सामाजिक स्तर पर पितृसत्तात्मक मानसिकता, लैंगिक भेदभाव, घरेलू उत्तरदायित्वों का अत्यधिक बोझ तथा महिलाओं की सीमित गतिशीलता SHGs की प्रभावशीलता को प्रभावित करती है। अनेक क्षेत्रों में महिलाएँ समूह की सदस्य तो होती हैं, किंतु वित्तीय निर्णयों पर नियंत्रण परिवार के पुरुष सदस्यों के हाथों में रहता है। इससे वास्तविक सशक्तिकरण की प्रक्रिया बाधित होती है। आर्थिक दृष्टि से SHGs को उत्पादों के विपणन, ब्रांडिंग, गुणवत्ता नियंत्रण तथा प्रतिस्पर्धी बाजार तक पहुँच में कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। अधिकांश समूह स्थानीय बाजारों तक ही सीमित रहते हैं तथा आधुनिक तकनीक, ई-कॉमर्स और मूल्य संवर्धन (Value Addition) का पर्याप्त लाभ नहीं उठा पाते। इसके अतिरिक्त समय पर ऋण उपलब्ध न होना, अपर्याप्त प्रशिक्षण तथा विभिन्न संस्थाओं के बीच समन्वय का अभाव भी SHGs की कार्यक्षमता को प्रभावित करता है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से देखा जाए तो कई क्षेत्रों में SHGs की गतिविधियाँ आर्थिक स्तर तक सीमित रह जाती हैं और वे सामाजिक परिवर्तन, लैंगिक समानता तथा सामुदायिक नेतृत्व के व्यापक उद्देश्यों को पूरी तरह प्राप्त नहीं कर पातीं। इसलिए SHGs की सफलता केवल समूहों की संख्या से नहीं, बल्कि महिलाओं की निर्णय क्षमता, सामाजिक प्रतिष्ठा और नेतृत्व में आए वास्तविक परिवर्तन से मापी जानी चाहिए।

सुझाव

ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण में SHGs की प्रभावशीलता बढ़ाने के लिए बहुआयामी रणनीतियों की आवश्यकता है। सर्वप्रथम महिलाओं की वित्तीय, डिजिटल एवं कानूनी साक्षरता को बढ़ावा देने हेतु नियमित प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए। इससे महिलाएँ बैंकिंग सेवाओं, डिजिटल भुगतान प्रणालियों तथा सरकारी योजनाओं का अधिक प्रभावी उपयोग कर सकेंगी। दूसरे, SHGs को केवल बचत एवं ऋण गतिविधियों तक सीमित न रखकर उन्हें उद्यमिता विकास, कौशल उन्नयन, मूल्य संवर्धन, ब्रांडिंग तथा ई-कॉमर्स से जोड़ा जाना चाहिए। स्थानीय उत्पादों के विपणन हेतु सरकारी एवं निजी संस्थाओं के सहयोग से स्थायी बाजार उपलब्ध कराए जाएँ। तीसरे, पंचायत राज संस्थाओं, कृषि विस्तार सेवाओं, स्वयंसेवी संगठनों तथा वित्तीय संस्थानों के साथ SHGs का समन्वय सुदृढ़ किया जाए, ताकि महिलाओं को प्रशिक्षण, तकनीकी सहायता तथा विपणन सुविधाएँ एकीकृत रूप से प्राप्त हो सकें। चौथे, SHGs के माध्यम से महिलाओं में नेतृत्व क्षमता, सामाजिक जागरूकता एवं अधिकार-आधारित दृष्टिकोण को विकसित किया जाए। घरेलू हिंसा, लैंगिक समानता, बालिका शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण तथा पर्यावरण संरक्षण जैसे सामाजिक मुद्दों पर समूहों की सक्रिय भूमिका सुनिश्चित की जानी चाहिए। अंततः SHGs के मूल्यांकन में केवल वित्तीय उपलब्धियों पर नहीं, बल्कि महिलाओं की निर्णय-निर्माण क्षमता, सामाजिक सहभागिता, नेतृत्व, आत्मविश्वास तथा जीवन की गुणवत्ता जैसे गुणात्मक संकेतकों को भी सम्मिलित किया जाना चाहिए। इससे महिला सशक्तिकरण की वास्तविक स्थिति का अधिक समग्र आकलन संभव होगा।

निष्कर्ष

ग्रामीण महिलाओं का सशक्तिकरण भारत के समावेशी एवं सतत विकास की आधारभूत आवश्यकता है। इस दिशा में स्वयं सहायता समूह (SHGs) ने आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा मनोवैज्ञानिक स्तर पर महिलाओं के जीवन में सकारात्मक परिवर्तन लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। SHGs ने महिलाओं को बचत, ऋण, उद्यमिता तथा वित्तीय समावेशन के अवसर प्रदान करने के साथ-साथ आत्मविश्वास, नेतृत्व क्षमता, सामाजिक पहचान तथा सामुदायिक सहभागिता को भी सुदृढ़ किया है। परिणामस्वरूप महिलाएँ परिवार एवं समुदाय में निर्णय-निर्माण की प्रक्रिया में अधिक सक्रिय हुई हैं और स्थानीय विकास में उनकी भूमिका सशक्त हुई है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से SHGs केवल आर्थिक संस्थाएँ नहीं हैं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन के प्रभावी माध्यम हैं। ये समूह महिलाओं के बीच सामाजिक पूँजी, सामूहिक चेतना, सहयोग तथा सहभागी विकास की भावना का निर्माण करते हैं और पितृसत्तात्मक शक्ति-संरचनाओं को चुनौती देते हैं। नायला कबीर का सशक्तिकरण मॉडल, अमर्त्य सेन का क्षमता दृष्टिकोण, बोरदियू का सामाजिक पूँजी सिद्धांत तथा गिडेन्स का संरचनाकरण सिद्धांत इस परिवर्तनकारी भूमिका को समझने के लिए उपयुक्त सैद्धांतिक आधार प्रदान करते हैं। यद्यपि वित्तीय साक्षरता, डिजिटल विभाजन, बाजार तक सीमित पहुँच तथा सामाजिक रूढ़ियाँ जैसी चुनौतियाँ अभी भी विद्यमान हैं, फिर भी उपयुक्त नीतिगत समर्थन, संस्थागत सहयोग, कौशल विकास तथा डिजिटल समावेशन के माध्यम से SHGs की प्रभावशीलता को और अधिक सुदृढ़ किया जा सकता है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि स्वयं सहायता समूह केवल ग्रामीण महिलाओं की आजीविका सुधारने का माध्यम नहीं हैं, बल्कि वे सामाजिक न्याय, लैंगिक समानता, सामुदायिक सहभागिता तथा सतत ग्रामीण विकास की आधारशिला हैं। भविष्य में SHGs को अधिक सशक्त, स्वायत्त एवं नवाचार-आधारित संस्थाओं के रूप में विकसित करना ग्रामीण भारत में महिला

© 2025 बसुंधरा शुक्ला, राजश्री मठपाल. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND). https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

सशक्तिकरण और समावेशी विकास की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम सिद्ध होगा।

संदर्भ सूची

1. Mayoux L. Tackling the down side: Social capital, women's empowerment and micro-finance in Cameroon. *Dev Change*. 2001;32(3):435-464.
2. Ministry of Rural Development. *Swarnjayanti Gram Swarozgar Yojana (SGSY): Guidelines*. New Delhi: Government of India; 1999.
3. Ministry of Rural Development. *National Rural Livelihoods Mission (NRLM): Framework for implementation*. New Delhi: Government of India; 2011.
4. Ministry of Rural Development. *Deendayal Antyodaya Yojana–National Rural Livelihoods Mission (DAY-NRLM): Annual Report 2023–24*. New Delhi: Government of India; 2024.
5. National Bank for Agriculture and Rural Development. *SHG–Bank Linkage Programme: Policy circular*. Mumbai: NABARD; 1992.
6. National Statistical Office. *Time Use Survey 2019*. New Delhi: Ministry of Statistics and Programme Implementation; 2021.
7. National Statistical Office. *Periodic Labour Force Survey (PLFS): Annual Report 2023–24*. New Delhi: Ministry of Statistics and Programme Implementation; 2024.
8. Nobel Foundation. *The Nobel Peace Prize 2006: Muhammad Yunus and Grameen Bank*. Stockholm: Nobel Foundation; 2006.
9. Planning Commission. *Eleventh Five Year Plan (2007–2012): Volume II—Social Sector*. New Delhi: Government of India; 2008.
10. Putnam RD. *Making democracy work: Civic traditions in modern Italy*. Princeton (NJ): Princeton University Press; 1993.
11. Sen A. *Development as freedom*. New Delhi: Oxford University Press; 1999.
12. United Nations Development Programme. *Human Development Report 2023/24*. New York: UNDP; 2023.
13. United Nations. *Report of the World Conference of the International Women's Year, Mexico City, 19 June–2 July 1975*. New York: United Nations; 1975.
14. United Nations. *Convention on the Elimination of All Forms of Discrimination Against Women (CEDAW)*. New York: United Nations; 1979.
15. United Nations. *Beijing Declaration and Platform for Action: Fourth World Conference on Women*. New York: United Nations; 1995.
16. United Nations. *Transforming our world: The 2030 agenda for sustainable development*. New York: United Nations; 2015.
17. World Bank. *World Development Report 2012: Gender equality and development*. Washington (DC): World Bank; 2012.
18. Yunus M. *Creating a world without poverty: Social business and the future of capitalism*. New York: PublicAffairs; 2007.

Creative Commons (CC) License

This article is an open-access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution (CC BY 4.0) license. This license permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original author and source are credited.

© 2025 बसुंधरा शुक्ला, राजश्री मठपाल. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND). https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/